उभरते बाजारों की क्षमता को मापना - क्या सुदृढ़ वित्तीय स्थिरता से वृद्धि हासिल की जा सकती है *

आनंद सिन्हा

इंटरनेशनल फाइनेंस, फाइनेंसियल टाइम्स की मुख्य संवाददाता एवं इस पैनल चर्चा की संचालक सुश्री हेन्नी सेंडर, पैनल के अन्य सहभागी, श्री बंट घोष, आस्ति प्रबंध से संबंधित उभरते बाजार के प्रमुख रणनीतिज्ञ, क्रेडिट सुसे, श्री सुनील गोधवानी, मुख्य प्रबंध निदेशक, रेलीगेयर इन्टरप्राइज़ेज, श्री सिजवे नक्साना, प्रमुख कार्यकारी अधिकारी, फर्स्ट रैंड ग्रुप; डॉ. राना कपूर, संस्थापक, प्रबंध निदेशक और मुख्य कार्यकारी अधिकारी, येस बैंक; अन्य प्रतिनिधि तथा प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के सदस्य। आप सभी को नमस्कार।

2. निस्संदेह यह मान लिया गया है कि वित्तीय स्थिरता एक ऐसा लक्ष्य है जिसे प्राप्त करने के लिए हम सभी को कोशिश करनी चाहिए। वैश्विक वित्तीय संकट से मिली सीख के परिप्रेक्ष्य में इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि वित्तीय स्थिरता के लिए किए जाने वाले प्रयास का वृद्धि पर प्रतिकूल असर होता है, यह बहस जारी है कि वृद्धि और स्थिरता के बीच सामंजस्य कैसे बनाया जाए। इस महत्त्वपूर्ण नीतिगत बहस के आलोक में फाइनेंसियल टाइम्स-यश बैंकिंग सम्मेलन के हिस्से के रूप में 'उभरते बाजारों की क्षमता को मापना - क्या टिकाऊ वित्तीय स्थिरता से वृद्धि हासिल की जा सकती है' विषय पर आयोजित यह पैनल चर्चा बहुत सामयिक और उपयुक्त है।

3. पैनल चर्चा प्रारंभ होने के पहले मैं कुछ मुद्दों की संक्षिप्त चर्चा करना चाहूंगा।

I. वृद्धि बनाम स्थिरता - क्या इनके बीच कोई संबंध है ?

4. वैश्विक वित्तीय संकट से मिली सीख ने वित्तीय स्थिरता के महत्त्व पर बहुत स्पष्ट रूप से जोर दिया है। वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए नीतियां लागू नहीं की गईं तो ऋण चक्र में सुधार से उत्पन्न हुई वृद्धि की स्थिति खराब समय आने पर बहुत बिगड़ जाएगी जिसका वित्तीय प्रणाली और समष्टि अर्थव्यवस्था पर गंभीर प्रभाव पड़ेगा जो कि उत्पादन की बड़ी हानि, वृद्धि में कमी, बढ़ती बेरोजगारी, क्षतिग्रस्त वित्तीय बाजार, कमजोर बैंक और वित्तीय प्रणाली, मौद्रिक नीति संचरण के क्षतिग्रस्त होने और निराशावादी भाव के रूप में होगा। ऐसी परिस्थितियों में, बैंक बिल्कुल भी जोखिम नहीं लेना चाहते और उनके पास ऋण देने के लिए आवश्यक विवेकी क्षमता नहीं रह जाती। इसके अलावा, वित्तीय मध्यवर्ती संस्थाओं पर बाजार का भरोसा न होने के कारण निधीयन की लागत बढ़ जाती है। इसके कारण डीलिवरेजिंग होती है अथवा ऋण की उच्चतर दरों के कारण ऋण देने में कमी होती है। इस प्रकार, ऋण आपूर्ति में काफी कमी हो जाती है जब कि अर्थव्यवस्था में और अधिक ऋण की बहुत अधिक आवश्यकता होती है। जैसा कि गवर्नर महोदय, डॉ. सुब्बाराव[1] ने उल्लेख किया है, गरीब और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को वित्तीय अस्थिरता के कारण बहुत अधिक क्षति हो सकती है। वित्तीय संकट के साथ मंदी के बारे में महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि ऋण की मांग भी काफी कम हो जाती है तथा अर्थव्यवस्था के उफान के चरण में कर्ज के बहुत बढ़ जाने और हाउसहोल्ड्स, कंपनियों, बैंकों और वित्तीय प्रणाली की अन्य संस्थाओं द्वारा निर्मित उच्च लिवरेज के कारण दूसरी मंदियों की तुलना में वृद्धि को संभलने में बहुत अधिक समय लगता है।

5. संकट-पूर्व अवधि में प्रणालीगत जोखिम की समझ और उसे हल करने की ढांचागत कमी प्रमुख रूप से देखी गई। यह धारणा भी मजबूत थी कि मुद्रास्फीति नियंत्रण के माध्यम से प्राप्त मूल्य स्थिरता से समष्टि आर्थिक स्थिरता प्राप्त होगी जो कि वित्तीय स्थिरता प्राप्त करने के लिए आवश्यक और पर्याप्त स्थिति थी। विनियामकों और पर्यवेक्षकों को विवेकसम्मत विनियमों के माध्यम से बैंकों को मजबूत बनाना सुनिश्चित करना था। यह पहले ही मान लिया गया था कि परिष्कृत और दक्ष वित्तीय बाजार, जोखिमों को जोखिम से निपटने में सक्षम आर्थिक पक्षों में विभाजित कर देंगे। मौद्रिक नीति का मूल्य स्थिरता पर विशेष रूप से ध्यान होने के अनुरूप प्रभावी सिद्धांत

* 'तनाव या स्थिरता'? बैंकिंग प्रणाली में सुधार करना' विषय पर 15 अक्तूबर 2012 को मुंबई में आयोजित फाइनेंसियल टाइम्स-येस बैंक अंतरराष्ट्रीय बैंकिंग सम्मेलन में श्री आनंद सिन्हा, उप गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा दिया गया उदघाटन भाषण। इसे तैयार करने में श्री अजय प्रकाश और श्री यरसि जयकुमार की ओर से साभार सहयोग मिला।

[1] *'वित्तीय स्थिरता : मुद्दे और चुनौतियां'* (सितंबर 2009) - डॉ. दुव्वुरी सुब्बाराव का भाषण।

(ग्रीनस्पान पुट) यह था कि मौद्रिक नीति विभिन्न कारणों से आस्ति की अस्थिर वृद्धि से निपटने में सक्षम नहीं थी और हो भी नहीं सकती थी बल्कि आस्ति की अस्थिर वृद्धि समाप्त होने पर मौद्रिक नीति में ढील देकर उससे सक्रियता पूर्वक निपटा जा सकता है जिससे अर्थव्यवस्था वापस पटरी पर आ जाएगी। हाल ही के समय तक इस सिद्धांत के कायम रहने का कारण यह था कि 1987 में स्टॉक बाजार के ढह जाने तथा अधिक हालिया डॉट काम अस्थिरता सहित पिछले मामलों में इसने ठीक काम किया। वर्तमान संकट को देखते हुए इस सिद्धांत की साख अब पूर्णतः समाप्त हो चुकी है। सिद्धांत की विफलता की व्याख्या संभवतः वर्तमान संकट के दौरान कर्ज और लिवरेज के बहुत उच्च स्तर के माध्यम से की जा सकती है।

6. यह स्पष्ट है कि संकट-पूर्व अवधि में प्रणालीगत जोखिमों की समझ अपर्याप्त थी और उनसे निपटने के लिए कोई ढांचा उपलब्ध नहीं था। मेरी समझ से बासेल III ढांचे के अंतर्गत सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और नया आयाम प्रणालीगत जोखिमों और उसके बाद वित्तीय स्थिरता के मामलों से निपटने के लिए ढांचा तैयार करना है।

7. मैं, अब संक्षिप्त में यह चर्चा करूंगा कि किस प्रकार से वित्तीय स्थिरता अर्थात प्रणालीगत जोखिमों से निपटने की कोशिश का वृद्धि पर विपरीत प्रभाव होता है। अनुचक्रीयता के विषयों (प्रणालीगत जोखिम का समय से संबंधित पहलू) से निपटने के लिए इसकी तेजी की स्थिति में होने के दौरान पूंजी और/या प्रावधानीकरण करने संबंधी बफर बनाए जाने की जरूरत है ताकि बैंकिंग प्रणाली में आघात सहनीयता बढ़ायी जा सके और इसमें कमी लाने के उद्देश्य से ऋण चक्र का सामना किया जा सके।

8. आपस में सघनता से जुड़े हुए बैंकों (प्रणालीगत जोखिम के विभिन्न खंडों वाले आयाम) अर्थात प्रणालीगत दृष्टि से महत्त्वपूर्ण बैंकों (एसआईबी) के विफल/क्षतिग्रस्त होने के कारण उत्पन्न प्रतिकूल बाहरी परिस्थितियों से निपटने के लिए उनकी विफलता की संभावना को कम करने और यदि वे असफल हो जाएं तो वित्तीय प्रणाली पर पड़ने वाले उनके प्रभाव को कम करने के लिए कदम उठाने की जरूरत है। दूसरे शब्दों में, वित्तीय स्थिरता के लिए किए गए उपायों का लक्ष्य प्रणालीगत दृष्टि से महत्त्वपूर्ण बैंकों को उनकी क्रमबद्धता में कमी लाने को प्रोत्साहित करना होगा। इससे बड़ी मात्रा और संभावना के लाभों से तालमेल हो सकता है।

9. इस प्रकार, वित्तीय स्थिरता के प्रयास वृद्धि पर विपरीत असर डालते हैं। अक्सर व्यक्त की जाने वाली एक अन्य चिंता यह है कि बासेल III के अंतर्गत पूंजी संरचना के तहत इक्विटी के अपेक्षित काफी उच्च स्तर के चलते पूंजीगत बफर से बैंकों को इक्विटी पर काफी कम प्रतिलाभ मिलेगा और निवेशकों का सरोकार बनाए रखना कठिन होगा और पूंजी जुटाना भी मुश्किल हो जाएगा। इन पहलुओं से उत्पन्न चिंताओं को समझा जा सकता है। वैश्विक वित्तीय प्रणाली और समष्टि अर्थव्यवस्था की स्थिति के कारण ये चिंताएं विशेष रूप से बढ़ गई हैं। बैंकिंग प्रणाली को, विशेष रूप से विकसित अर्थव्यवस्थाओं में, समष्टि अर्थव्यवस्था के अनिश्चित और मंदी की अवस्था में होने पर भी पूंजी और चलनिधि स्तर को बनाना है और बासेल III लागू किया जाना है। इन उपायों को आदर्श रूप में तब लागू किया जा सकता है जब समष्टि अर्थव्यवस्था और वित्तीय प्रणाली अच्छी अवस्था में हो। इसलिए बहुत से लोग इन स्थितियों में वित्तीय स्थिरता की खातिर वृद्धि से समझौता करने से सहमत नहीं हैं। किंतु, विशेष रूप से विकसित अर्थव्यवस्थाओं में, बैंकों के पुनः पूंजीकरण का कोई विकल्प नहीं है क्योंकिइन उपायों के बिना समष्टि अर्थव्यवस्था में सुधार नहीं हो सकता। इसका विकल्प यह हो सकता है कि बाजार का भरोसा प्राप्त करने और विवेकसम्मत मानकों को पूरा करने के लिए बड़े पैमाने पर डीलिवरेजिंग की जाए। ऐसा करना समष्टि अर्थव्यवस्था पर बहुत हानिकारक प्रभाव डाल सकता है। इस प्रकार, अल्पावधि के संबंध में स्पष्ट दुविधा की स्थिति है जिसे दीर्घावधिक दृष्टि से हल किए जाने की आवश्यकता है। किंतु, अध्ययनों से इस तथ्य का पता चलना राहत की बात है कि है कि बासेल III के लागू किए जाने से वृद्धि पर अधिक प्रतिकूल असर नहीं पड़ेगा। बैंकिंग पर्यवेक्षण बासेल समिति ने पड़ने वाले असर से संबंधित विस्तृत अध्ययन किया है जिससे पता चलता है कि संपूर्ण बासेल III 35 तिमाहियों में चरणबद्ध रूप से लागू किया जाता है तो वर्तमान प्रवृत्ति (अर्थात 0.03 प्रतिशत प्रतिवर्ष) को देखते हुए सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि में 0.22 प्रतिशत कमी आएगी तथा इस अवधि के बाद यह वापस इस बिंदु पर आ जाएगी। संक्रमण की अवस्था के दौरान पूंजी के प्रत्येक प्रतिशत की वृद्धि के कारण सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि में 0.17 प्रतिशत की कमी आएगी। टिकाऊ वित्तीय स्थिरता को प्राप्त करने के लिए यह कीमत अधिक नहीं है। इसी कारण से बासेल समिति ने कार्यान्वयन की अवधि को 6 वर्ष रखा है ताकि वृद्धि पर इसके असर को कम से कम किया जा सके और इसे वहनीय बनाया जा सके। किंतु यह नोट किया जाना चाहिए कि वृद्धि पर वास्तविक असर स्पष्ट रूप से पूंजी के उस स्तर पर निर्भर करेगा जिस पर बैंक परिचालन करना चाहेंगे। इन स्तरों के बासेल III में निर्धारित न्यूनतम स्तर से अधिक होने की संभावना है।

10. इक्विटी पर कम प्रतिलाभ के कारण निवेशकों की रुचि में संभावित कमी के संबंध में यह तर्क दिया जाता है कि अपेक्षाकृत कम

लिवरेज पर बैंक अधिक सुरक्षित होंगे और इसलिए निवेशक कम प्रतिलाभ की मांग करेंगे। अध्ययनों से पता चलता है कि दीर्घावधि में विभिन्न खंडों (वित्तीय और गैर वित्तीय फर्मों -दोनों में) में इक्विटी पर प्रतिलाभों का औसत बहुत भिन्न नहीं है। अपेक्षाकृत कम लिवरेज के कारण बैंकिंग स्टॉक के प्रतिलाभ में कम उतार-चढ़ाव होगा जो कि निवेशकों के अनुकूल हो सकता है।

11. इस प्रकार, यह उम्मीद की जाती है कि बासेल ढांचे के अंतर्गत वित्तीय स्थिरता के प्रयासों में तालमेल के कारण वृद्धि के लिए चुकाई जाने वाली कीमत अधिक नहीं होगी और बैंकिंग स्टॉकों में निवेशकों की रुचि बनी रहेगी।

II. उभरते बाजारों की क्षमता को मापना

12. अब मैं आपका ध्यान चर्चा के एक अन्य विषय *'उभरते बाजारों की क्षमता को मापना'* की ओर आकृष्ट करना चाहूंगा। बहुत से उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं ने पिछले दशक में और वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान बढ़िया कार्य किया है (सारणी)। इन अर्थव्यवस्थाओं की वृद्धि में 2003-07 के दौरान तेजी आई जबकि विकसित अर्थव्यवस्थाओं की वृद्धि काफी कम रही जिसके कारण एक बड़ी बहस प्रारंभ हुई कि क्या उभरते बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाएं विकसित अर्थव्यवस्थाओं से अलग हो गई हैं।

13. विकसित अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं ने अधिक आघात सहनीय होने का प्रमाण दिया है। 1990 के दशक से हुए सफल सुधारों के कारण उभरते बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाएं बाजार की शक्तियों के

सारणी : वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद की विभिन्न देशों में वृद्धि दरें (बाजार मूल्यों के आधार पर)*

देश/देश समूह	2007	2008	2009	2010	2011	2012अ
1	2	3	4	5	6	7
विश्व	5.4	2.8	-0.6	5.1	3.8	3.3
उन्नत अर्थव्यवस्थाएं	2.8	0.1	-3.5	3.0	1.6	1.3
जर्मनी	3.4	0.8	-5.1	4.0	3.1	0.9
जापान	2.2	-1.0	-5.5	4.5	-0.8	2.2
सिंगापुर	8.9	1.7	-1.0	14.8	4.9	2.1
यूनाइटेड किंगडम	3.6	-1.0	-4.0	1.8	0.8	-0.4
अमरीका	1.9	-0.3	-3.1	2.4	1.8	2.2
यूरो क्षेत्र	3.0	0.4	-4.4	2.0	1.4	-0.4
उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएं	8.7	6.1	2.7	7.4	6.2	5.3
ब्राजील	6.1	5.2	-0.3	7.5	2.7	1.5
चीन	14.2	9.6	9.2	10.4	9.2	7.8
भारत	10.0	6.9	5.9	10.1	6.8	4.9
इंडोनेशिया	6.3	6.0	4.6	6.2	6.5	6.0
रूस	8.5	5.2	-7.8	4.3	4.3	3.7

*: कैलेंडर वर्ष अ: अनुमानित
स्रोत: अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक (डब्लूईओ), अक्तूबर 2012

प्रति अधिक प्रतिक्रियाशील हो गई हैं। नवीनतम वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक (अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष - अक्तूबर 2012) में उल्लेख किया गया है कि उभरते बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की आघात सहनीयता में उल्लेखनीय सुधार, जो कि आर्थिक विस्तार को जारी रखने और मंदी से शीघ्रतापूर्वक संभलने की उनकी क्षमताओं से मापा गया, के कारण इस प्रकार थे: बेहतर नीति निर्माण (प्रतिचक्रीय नीति, मुद्रास्फीति नियंत्रण और लचीली विनिमय दर के दौर) और

चार्ट: देश समूहों में वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि (1980-2012)

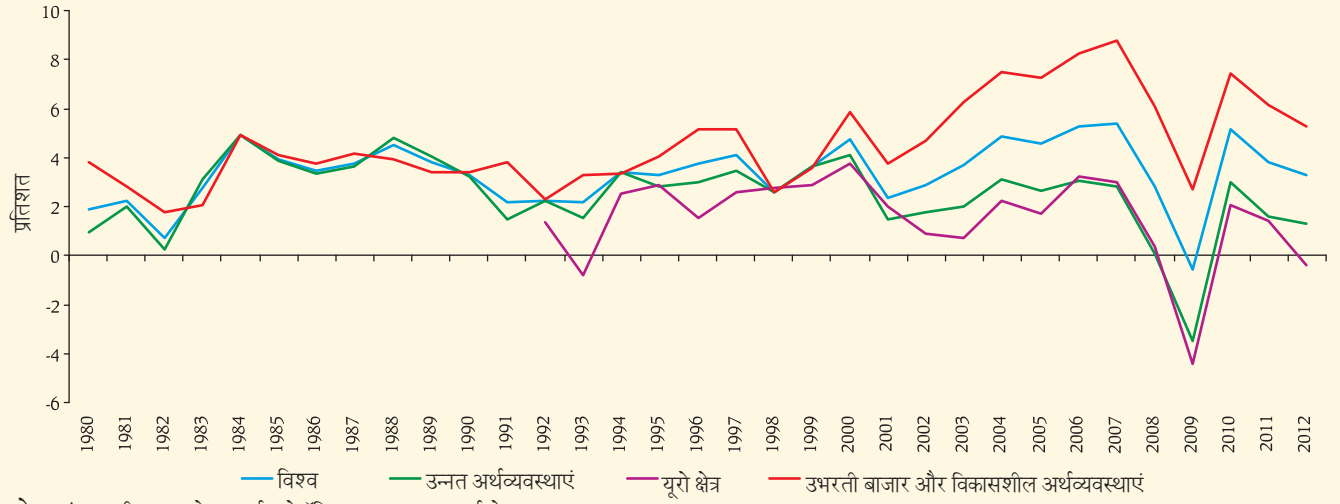

स्रोत: अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक (डब्लूईओ), अक्तूबर 2012.

नीतिगत क्षेत्र में सुधार (कम मुद्रास्फीति और अनुकूल राजकोषीय और बाहरी स्थितियां जिसकी विशेषता रहीं) के साथ में आघातों की, विशेष रूप से घरेलू स्तर पर उत्पन्न आघातों में कमी। उभरते बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाएं विकसित अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में विस्तार पर अधिक ध्यान दे रही हैं और इनमें मंदी कम है। बढ़ी हुई आघात सहनीयता के परिणामस्वरूप उभरते बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं का स्थान संकट के बाद के सुधारों और लगभग संपूर्ण विश्व की वृद्धि में प्रमुख था।

14. वैश्विक उत्पादन में उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं का हिस्सा अभी भी बहुत कम, लगभग 30 प्रतिशत है किंतु वैश्विक वृद्धि में उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं का योगदान बढ़ता गया है जो लगभग 70 प्रतिशत है। विकसित अर्थव्यवस्थाओं और उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के बीच निवेश अंतर कम होना, जो अब लगभग समाप्त हो चुका है, यह पिछले दशक में हुई एक उल्लेखनीय घटना रही है। विकसित अर्थव्यवस्थाओं में निवेश मंद हुआ और कम भी हुआ है जिससे उनकी वृद्धि दर कम होने, जनसंख्या के वृद्ध होने और पूंजीगत आधार के बहुत उच्च होने का पता चलता है। निरपेक्ष रूप से कहा जाए तो कुछ समय पहले (2005 में) उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में निवेश विकसित अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में एक चौथाई था। वर्तमान में उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं का निवेश विकसित अर्थव्यवस्थाओं के बराबर है जो कि लगभग 5.5 ट्रिलियन अमरीकी डॉलर है।

15. कुछ उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में हुई हाल की वृद्धि में पूंजीगत आवक, मजबूत ऋण वृद्धि और पण्यों का निर्यात करने वालों के लिए पण्यों के मूल्यों में लगातार सुधार होने से, जिन पर व्यापार, वित्त और विश्वास माध्यमों के चलते बढ़ती वित्तीय परस्पर निर्भरता के चलते कमजोर होने का जोखिम होता है, संबल मिला। इससे इन अर्थव्यवस्थाओं का भविष्य उतना अधिक मजबूत नहीं होने का पता चलता है (फ्रैंकेल, 2012)[2]। उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में बाहरी आघातों के प्रति अपेक्षाकृत अधिक आघात सहनीयता दिखाई देने और संकट की अवधि में अधिक मजबूत आर्थिक वृद्धि होने के बावजूद विकासशील और विकसित देशों का अलगाव (डिकपलिंग) हो जाने की धारणा असंभव प्रतीत होती है। वैश्विक वित्तीय संकट ने अलगाव की धारणा को काफी हद तक कमजोर किया और राजकोषीय गिरावट, बैंकिंग का दर्जा घटाने वाली घटनाओं और राजनीतिक अनिश्चितताओं के कारण मई 2012 से बढ़े यूरोजोन संकट के कारण ऐसा प्रतीत होता है कि यह धारणा समाप्त ही हो गई है। इसके अलावा, पिछले दशक में उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं द्वारा निर्मित नीतिगत सुदृढ़ता वैश्विक संकट के दौरान पूर्णतः उपयोग में आ गई जिसका अभी तक पुनर्निर्माण नहीं किया गया है जिसके कारण ये अर्थव्यवस्थाएं बाहरी और आंतरिक -दोनों आर्थिक आघातों के प्रति संवेदनशील हो गई हैं।

16. इसलिए काफी समय से उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्था की वृद्धि मंद होना अप्रत्याशित नहीं है। विकसित अर्थव्यवस्थाओं की समष्टि आर्थिक परिस्थितियों की नकारात्मकता के विस्तार के अलावा डीलिवरेजिंग और वित्तीय अनिश्चितताओं के कारण भी पूंजीगत आवक में उतार-चढ़ाव आया है। इसके अलावा उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की घरेलू अर्थव्यवस्थाओं से संबंधित विशिष्ट विविध कारक भी उनकी मंदी के लिए उत्तरदायी रहे हैं। ऋण परिस्थितियों (स्थावर संपदा में अस्थायी वृद्धि के खतरे की प्रतिक्रिया स्वरूप) के कमजोर होने, सार्वजनिक निवेश की और अधिक टिकाऊ गति पर वापसी और विकसित अर्थव्यवस्थाओं में मंदी के कारण कमजोर बाहरी मांग के चलते चीनी अर्थव्यवस्था में भी तेजी से कमी आई। उदाहरण के लिए चीन का अधिशेष 2011 में घटकर सकल घरेलू उत्पाद का 2.8 प्रतिशत हो गया जो कि 2010 में 5 प्रतिशत से अधिक था। 2012 की दूसरी तिमाही में चीन की वृद्धि तीन वर्षों के सबसे निम्न स्तर 7.6 प्रतिशत पर आ गई जो कि प्रथम तिमाही में 8.1 प्रतिशत थी। औद्योगिक क्षेत्र में 9 प्रतिशत से थोड़े ही अधिक वृद्धि होने, जो कि तीन वर्षों में सबसे कम है, के कारण भी चीनी अर्थव्यवस्था का कमजोर होना जारी है। नई परियोजनाओं के अनुमोदन में समय लगने और ढांचागत सुधारों में ढिलाई तथा मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने के लिए बनाए गए नीतिगत वातावरण से कारोबारी भरोसे के कमजोर पड़ने के कारण भारत की गतिविधियों को नुकसान हुआ। ब्राजील की अर्थव्यवस्था में 2012 की पहली तिमाही में दो से अधिक वर्षों की सबसे कम गति से (तिमाही-दर-तिमाही आधार पर 0.2 प्रतिशत) वृद्धि हुई। ब्राजील पर पण्यों के घटते मूल्य और पूंजीगत बहिर्वाह का प्रभाव पड़ा और केंद्रीय तथा पूर्वी यूरोप पर यूरोपीय संघ में कमजोर मांग होने और यूरो क्षेत्र के बैंकों द्वारा की गई घटौती का प्रभाव पड़ा।

17. बहुत से विशाल और तेजी से वृद्धि कर रहे उभरते बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाएं अपनी क्षमता के करीब अथवा उससे ऊपर के स्तर पर पहुंच चुके हैं जिससे पता चलता है कि वे वैश्विक वृद्धि को पहले की तरह प्रभावित नहीं कर पाएंगे। घरेलू उपभोग और मांग के पक्ष में कुछ उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की विकास की रणनीति में हुए स्पष्ट परिवर्तन के कारण मजदूरी के स्तर में काफी वृद्धि हुई जिसके कारण मुद्रास्फीतिकारी प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिला। वर्तमान में उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की नीतियों में उपाय करने की संभावना 2008-09 की तुलना में कम प्रतीत होती है। वैश्विक वित्तीय संकट के समय के दौरान उभरते

[2] फ्रैंकेल जेफ्री, 2012, 'क्या उभरते बाजार 2012 में गिर जाएंगे ?' *बिजनेस एंड मैनेजमैंट जर्नल*, भाग 2, सं. 2, पीपी. 119-20.

बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के घरेलू कारक संबल प्रदान करने वाले थे जिसके कारण मौद्रिक और राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों को व्यवस्थित करने को प्रोत्साहन मिला। यूरोजोन संकट के दौरान अधिकांश उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में घरेलू माहौल या तो बढ़ती मुद्रास्फीति अथवा राजकोषीय तंगी अथवा बढ़ते चालू खाता घाटा अथवा संयुक्त रूप से सभी के कारण सहयोगी नहीं है जिसके कारण व्यापक रूप से वैश्विक वित्तीय संकट के बने रहने की संभावना का पता चलता है। विशिष्टताओं की बात करें तो मौद्रिक प्रोत्साहन प्रदान करने की उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की क्षमता पर बढ़ती हुई मुद्रास्फीतिकारी अपेक्षाओं से बाधा आती है और बढ़ते हुए सकल लोक ऋण के कारण कोई सक्रिय राजकोषीय प्रोत्साहन उपाय की घोषणा करने की उनकी क्षमता सीमित होती है। उदाहरण के लिए 2008 के ऋण संकट के दौरान चीन द्वारा दो वर्षों के दौरान 4 ट्रिलियन युवान (586 बिलियन अमरीकी डॉलर) की राशि अर्थव्यवस्था में डालने का राजकोषीय उपाय किया गया और 17.6 ट्रिलियन युवान के बैंक ऋण ने वैश्विक अर्थव्यवस्था को सहयोग प्रदान किया। चीन के लिए अब कोई बड़ा राजकोषीय उपाय करना कठिन होगा क्योंकि चीन का आधिकारिक सरकारी ऋण यद्यपि सकल घरेलू उत्पाद का सिर्फ 27 प्रतिशत है किंतु स्थानीय सरकारों को दिए गए बैंक उधार को इसमें जोड़ दिया जाए तो कुल कर्ज सकल घरेलू उत्पाद के 60 प्रतिशत से अधिक हो जाएगा। इन परिस्थितियों में शायद देशों के समूह पर ध्यान केंद्रित करना उचित होगा जहां पर प्रोत्साहन उपाय करने के लिए पर्याप्त अवसर मिले। चीन, इंडोनेशिया और रूस के पास वृद्धि को सहारा देने के लिए मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों का प्रयोग करने की अधिक क्षमता है किंतु इजिप्त, भारत, ब्राजील और पोलैंड के पास प्रोत्साहन उपाय करने की सीमित क्षमता है[3]।

18. एक अन्य विचारधारा के अनुसार उपभोग और निवेश मांग के कमजोर होने की दशा में उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को समग्र मांग को बढ़ाने के नवोन्मेषी तरीके ढूंढने पड़ेंगे जो स्फीतिकारी न हों। कुछ उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में, जहां पर आधारभूत संरचना कमजोर है, आधारभूत संरचना में निवेश को बढ़ाना इस तरह का एक उपाय हो सकता है जैसे कि जापान और थाइलैंड में पुनर्संरचना से उत्पादन में तेजी लाने की संभावना है।

19. फिर भी यह प्रश्न बना रहता है कि निर्यातोन्मुखी वृद्धि से घरेलू मांग में संक्रमण कितना सहज और टिकाऊ होगा, विशेष रूप से उन अर्थव्यवस्थाओं में जहां हाउसहोल्ड ऋण अपेक्षाकृत अधिक है। यह भी स्पष्ट नहीं है कि वृद्धि की संरचना में परिवर्तन का नीतियों पर क्या असर पड़ेगा, विशेषरूप से यदि क्षेत्रीय अर्थव्यवस्थाएं विदेशी मुद्रा बाजारों में कम हस्तक्षेप करें।

20. अंत में, उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में दीर्घावधि दृष्टिकोण से विशिष्ट सकारात्मक पहलू हैं। हाल में हुए जनसांख्यिकीय परिवर्तनों से पता चलता है कि आने वाले वर्षों में इन देशों को उत्पादक जनबल का लाभ मिलेगा और जीवन चक्र की अवधारणा से पता चलता है वैश्विक बचत में उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं का महत्त्वपूर्ण हिस्सा होगा। उनके पक्ष में इन लाभपूर्ण स्थितियों के होने और विकसित तथा उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं -दोनों में संरचनागत सुधारों के साथ घरेलू मांग से प्रेरित होने वाली उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की और अधिक स्वतंत्र वृद्धि से सकारात्मक प्रतिक्रिया में स्पष्ट रूप से वृद्धि होगी जिसका लाभ सभी को मिलेगा। हालांकि कुछ हद तक अलग-अलग होने के बाद भी उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में सुधार विकसित अर्थव्यवस्थाओं में सुधार पर निर्भर हैं। उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में वृद्धि का संतुलन घरेलू उपभोग के पक्ष में किया जाना जारी है किंतु वृद्धि के लिए उनके स्वप्रेरित शक्ति बनने में कई वर्ष लगेंगे। इन परिस्थितियों में उभरते बाजारों और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं से स्वयं के बल पर वैश्विक वृद्धि को संकट के पहले के स्तर पर ले जाने की उम्मीद करना अयथार्थवादी प्रतीत होता है।

III. भारतीय वृद्धि और संभावना

भारत में हुई वृद्धि

21. वैश्विक वित्तीय संकट से तेजी से उबरने और लगातार दो वर्षों में 8.4 प्रतिशत की अच्छी वृद्धि होने के बाद 2011-12 में सकल घरेलू उत्पाद में बहुत तेजी से कमी आई और यह नौ वर्षों के सबसे निम्न स्तर 6.5 प्रतिशत पर पहुंच गई। औसत बचत दर में कमी आई, 2005-08 में यह 35.0 प्रतिशत थी जो 2008-11 में 32.7 प्रतिशत रह गई। इसका मुख्य कारण सार्वजनिक क्षेत्र की बचत दर में तेजी से आई कमी रही जिसकी भरपाई निजी बचत से नहीं की जा सकी। वैश्विक संकट के बाद के समय में सार्वजनिक क्षेत्र की औसत बचत में कमी से राजकोषीय प्रोत्साहन उपायों के साथ ही गैर-वित्तीय उद्यमों के योगदान का पता चलता है। संकट के बाद के समय में औसत निवेश दर में भी कमी आई है।

22. हाल के वर्षों में मंदी होने के बावजूद भारत के वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर विश्व भर में सर्वाधिक दरों में से एक रही है। यही बात 15 सितंबर 2012 को हुई योजना आयोग की पूर्ण बैठक में प्रधानमंत्री ने भी कही है कि '*ग्यारहवीं योजना की समाप्ति*

[3] द *इकोनॉमिस्ट*, 26 जनवरी 2012 में मौद्रिक और राजकोषीय गुंजाईश के अनुसार 27 उभरती अर्थव्यवस्थाओं का श्रेणी विभाजन।

भारतीय अर्थव्यवस्था में कुछ महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों के साथ हुई। अर्थव्यवस्था में 7.9 प्रतिशत की वार्षिक दर से वृद्धि हुई। जिस अवधि में दो वैश्विक संकट, पहला 2008 में और दूसरा 2011 में, देखे गए उस दौरान हुई यह वृद्धि प्रशंसनीय है।'

वृद्धि की संभावना

23. भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा 31 जुलाई 2012 को जारी 'मौद्रिक नीति वक्तव्य की प्रथम तिमाही समीक्षा 2012-13' में रिज़र्व बैंक ने मानसून में कमी और औद्योगिक गतिविधियों के कमजोर होने के मद्देनजर 2012-13 के लिए सकल घरेलू उत्पाद की अनुमानित दर में संशोधन करते हुए इसे 7.3 प्रतिशत से घटाकर 6.5 प्रतिशत कर दिया है। मौद्रिक नीति के संबंध में 17 सितंबर 2012 को जारी मध्यावधि तिमाही समीक्षा में कहा गया है कि '*पिछली तिमाही की तुलना में आर्थिक गतिविधियों में 2012-13 की पहली तिमाही में कुछ तेजी आई किंतु पहली तिमाही में योजित मूल्य की कमजोर गति का प्रभाव अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों पर, विशेष रूप से उद्योगों पर, पड़ा। प्रमुख संकेतकों से दूसरी तिमाही में भी गतिविधियां कमजोर रहने का संकेत मिल रहा है .....*'। इसके अलावा मध्यावधि तिमाही समीक्षा में यह उल्लेख किया गया है कि '..... *निवेश माहौल के नकारात्मक होने के कारण घरेलू वृद्धि कमजोर बनी हुई है। हालांकि सरकार की ओर से हाल में किए गए सुधारात्मक उपायों के कारण स्थिति में सुधार हो रहा है। सरकार ने ईंधन पर छूट कम करके और सार्वजनिक उद्यमों की हिस्सेदारी बेच कर राजकोषीय मजबूती के लिए बहुत पहले से प्रत्याशित उपाय किए हैं। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को बढ़ाने के लिए उठाए गए कदमों के कारण पूंजीगत आवक में वृद्धि तथा दीर्घावधि में अधिक उत्पादकता, विशेष रूप से खाद्य आपूर्ति श्रृंखला के संबंध में -दोनों में योगदान मिलने की आशा है।*

IV. वृद्धि को प्रोत्साहित करना भावी मार्ग

24. भारत में वैश्विक संकट से पहले विद्यमान समष्टि आर्थिक परिस्थितियों - नामतः कम मुद्रास्फीति, राजकोष का सुदृढ़ीकरण और चालू खाता घाटे का निम्न स्तर, को पुनः प्राप्त करना महत्त्वपूर्ण होगा जिसके कारण लगातार तीन वर्षों तक (2005-06 से 2007-08 तक) 9 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि दर सुनिश्चित की जा सकी थी। बाहरी परिस्थितियां जैसी भी हों घरेलू अर्थव्यवस्था से उनके अंतर्संबंधों को देखते हुए अल्पावधि में यह पूरी तरह से व्यवहार्य नहीं हो सकता। फिर भी, अर्थव्यवस्था को पटरी पर वापस लाने के लिए लक्ष्यबद्ध नीतिगत प्रयास किया जाना महत्त्वपूर्ण है।

25. आधारभूत संरचना क्षेत्र में वाणिज्यिक आधार पर संसाधनों के प्रवाह को सुनिश्चित करने के लिए भी उपाय किए जाने की आवश्यकता है। इसके बहुत से आयाम हैं किंतु आधारभूत कर्ज निधि की स्थापना इस दिशा में एक सकारात्मक कदम है। राज्यों के बीच स्टांप ड्यूटी को युक्तियुक्त बनाया जाना और पास-थ्रू-सर्टीफिकेट के संबंध में कर प्रबंध की समीक्षा किया जाना जैसे कुछ अन्य मुद्दे हैं। अनिवार्य जमा योजना (सीडीएस) अथवा बांड बीमा के रूप में जोखिम कम करने के वैकल्पिक उपाय ढूंढे जा रहे हैं। कॉर्पोरेट बांड बाजार में गहनता और सक्रियता लाने के लिए और अधिक प्रतिभागियों की आवश्यकता है।

26. 2012-13 के संघीय बजट में राजकोषीय सुदृढ़ीकरण प्रक्रिया को पुनःप्रारंभ करने की परिकल्पना और पेट्रोलियम उत्पादों (बजटीय छूट को कम करने के उद्देश्य से) के खुदरा मूल्यों में वृद्धि भी इस दिशा में उठाए गए महत्त्वपूर्ण कदम हैं। पेट्रोलियम उत्पादों के खुदरा मूल्यों में वृद्धि से मूल्य पर अल्पावधि दबाव बन सकता है किंतु समष्टि अर्थव्यवस्था पर दीर्घावधि में इनका लाभकारी प्रभाव पड़ेगा। टिकाऊ राजकोषीय सुदृढ़ीकरण से सार्वजनिक क्षेत्र की बचत में सुधार करने में भी मदद मिलेगी जो कि निजी क्षेत्र की बचत के साथ में वित्तीय निवेश आवश्यकताओं के वित्तपोषण को पूरा करने के लिए महत्त्वपूर्ण होगी। इस संदर्भ में, हाउसहोल्ड बचत का वित्तीय आस्तियों से स्वर्ण में अंतरण होने की प्रक्रिया को उलटना महत्त्वपूर्ण होगा। ऐसा करने से भुगतान संतुलन पर पड़ने वाले दबाव को कुछ हद तक कम किया जा सकेगा। पर्याप्त आपूर्ति को सुनिश्चित करना महत्त्वपूर्ण होगा।

27. जैसा कि मध्यावधि तिमाही समीक्षा में कहा गया है, वृद्धि के पुनरुज्जीवन को सहारा देने में मौद्रिक नीति को महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करनी है। '..... *बहुत सी चुनौतियां शेष हैं जिनमें से एक मुद्रास्फीति की निरंतरता है। किंतु जैसे-जैसे वृद्धि को प्रोत्साहित करने के लिए नीतिगत कदमों का कार्यान्वयन होगा वैसे-वैसे मुद्रास्फीति प्रबंधन पर अपना ध्यान केंद्रित करते हुए मौद्रिक नीति इन कदमों के सकारात्मक असर को बल देगी। ऐसा होने से ही हाल के और अनुमानित राजकोषीय तथा आपूर्ति पक्ष के नीतिगत उपायों से अर्थव्यवस्था का अधिकतम लाभान्वित होना सुनिश्चित किया जा सकेगा*'।

28. संकट से मिली सबसे महत्त्वपूर्ण सीखों में से एक इस सीख के साथ मैं अपना वक्तव्य समाप्त करूंगा कि बैंकिंग प्रणाली की आघात सहनीयता को बढ़ा कर अनुचक्रीयता से निपटने और अर्थव्यवस्था में बड़े वित्तीय असंतुलन को उत्पन्न होने से रोकने के लिए अर्थव्यवस्था के अच्छे समय के दौरान ऋण चक्र को नियंत्रित करने की आवश्यकता है। इस प्रकार, वृद्धि और स्थिरता में अल्पावधि तालमेल अवश्य होगा। दीर्घावधि में वृद्धि और स्थिरता सर्वथा भिन्न तो नहीं हैं किंतु एक दूसरे पर आश्रित हैं जो एक दूसरे का पोषण करती हैं। *वृद्धि के बिना स्थिरता प्रतिगामी होती है और स्थिरता के बिना वृद्धि विनाशकारी होती है।* प्रणाली में लचीलापन और स्थिरता लाने के

लिए जो नीतियां बनाई जा रही हैं वे अल्पावधि में वृद्धि को कम करती प्रतीत हो सकती हैं किंतु मध्यावधि एवं दीर्घावधि में निश्चित रूप से उनका सकारात्मक असर होगा। उभरते बाजार की वृद्धि गाथा की बात करें तो इन अर्थव्यवस्थाओं ने बेहतर नीति निर्माण के माध्यम से पर्याप्त नीतिगत गुंजाईश उत्पन्न कर अभी तक वैश्विक वृद्धि को सहारा दिया है किंतु उनसे इस भार को दीर्घावधि तक ढोने की अपेक्षा करना उनसे बहुत अधिक उम्मीद करना होगा। ये अर्थव्यवस्थाएं पहले ही वैश्विक मंदी, वित्तीय बाजारों की अनिश्चितता और विकसित अर्थव्यवस्थाओं में बहुत अधिक समायोजन वाली मौद्रिक स्थिति का असर झेल रही हैं। साथ ही साथ संकट के असर के चलते उनके पास पर्याप्त मौद्रिक और राजकोषीय गुंजाईश नहीं है। अंत में, भारतीय परिदृश्य की बात करें तो भारतीय वृद्धि में भी मंदी व्याप्त है। वृद्धि को प्रोत्साहित करने के लिए हमें प्रणाली की कमजोरियों पर ध्यान देने, सुधार करने और सामूहिक प्रयास करने की आवश्यकता है। राजकोषीय और चालू खाता घाटे को नियंत्रित करना और आपूर्ति पक्ष के मामलों को सुलझाना मुख्य बात होगी। किंतु, जब तक वैश्विक परिस्थितियों में सुधार न हो तब तक संकट पूर्व की वृद्धि दरों को हासिल करना कठिन होगा। आज हम जिस प्रकार की चुनौतियों का सामना कर रहे हैं उनका बढ़िया हल निकालनें में इस प्रकार के सम्मेलन महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इन मुद्दों पर आगे चर्चा करने के लिए अब मैं पैनल में शामिल होना चाहूंगा।